International Journal of Sanskrit Research 2019; 5(2): 103-109

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2019; 5(2): 103-109
© 2019 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 23-01-2019
Accepted: 25-02-2019

डॉ. घनश्याम भट्ट
प्रवक्ता- संस्कृत, रा इ का बेडगाँव, अल्मोड़ा, उत्तराखंड, भारत

Correspondence
डॉ. घनश्याम भट्ट
प्रवक्ता- संस्कृत, रा इ का बेडगाँव, अल्मोड़ा, उत्तराखंड, भारत

भारतीय धर्म एवं दर्शन में ईश्वर सम्बन्धी अवधारणा: एक विवेचन

डॉ. घनश्याम भट्ट

प्रस्तावना

प्राचीन भारतीय विचारकों के अनुसार धर्म और दर्शन अनादि, अनंत, सर्वव्यापक, सत्चिदानन्द परमतत्व ईश्वर की खोज का साधन है| धर्म एवं दर्शन में ईश्वर सम्बन्धी विचार से पूर्व धर्म और दर्शन में सम्बन्ध पर विचार करना आवश्यक प्रतीत होता है| धर्म की उत्पत्ति मनुष्य की उस आध्यात्मिक पिपासा से होती है जो उसे अपूर्णता,संकीर्णता,अभाव,भय आदि को दूर कर पूर्णता व सांसारिक दुखों से मुक्ति प्राप्त करने के

लिए अन्तःप्रेरणा प्रदान करती है| पूर्णता की प्राप्ति भौतिक समृद्धि से संभव नहीं होती है अतः मनुष्य आध्यात्मिक मूल्यों का आविष्कार कर उन्हें प्राप्त करने हेतु धर्माचरण करता है| धर्माचरण के अंतर्गत शारीरिक व मानसिक शुद्धि, कर्मकाण्ड, ईश्वर चिन्तन आदि आते हैं| धर्म शब्द 'धृ' धारणपोषणयो: धातु से बना है, जिसका अर्थ धारण और पोषण करना होता है' अर्थात जिस तत्व से पदार्थ का अस्तित्व है वही उस पदार्थ का धर्म है. बी के लाल ने टैगोर और राधाकृष्णन का जिग्र करते हुए कुछ इस प्रकार वर्णन किया है - "Tagore and Radha Krishanan point out that the concept of Dharma literally stands for a sort of a bringing out the most and the essential nature of the object." It is in this the capacity to produce heat, is said to be the dharma of fire and that waterness is said to be the dharma of water."[1]

अर्थात जिस प्रकार वस्तु अथवा पदार्थ का गुण-धर्म होता है उसी प्रकार मनुष्य का भी धर्म होता है| अस्तित्व का आधार धर्म है, धर्म के बिना अस्तित्व की कल्पना ही संभव नहीं है| व्यास मुनि ने भी महाभारत में कहा है कि "धारणात् धर्म इत्याहु: धर्मो धार्यते प्रजा:"2

दर्शन शब्द 'दृश्' धातु से करण अर्थ में 'ल्युट्' प्रत्यय लगाने से बनता है, जिसका तात्पर्य होता है 'दृश्यते= ज्ञायते आत्मतत्वं येन तद्दर्शनम्' अर्थात जिसके द्वारा मूलतत्व का बोध होता है उसे दर्शन कहते है|

दर्शन से हमें सम्यक दृष्टि प्राप्त होती है और सम्यक दृष्टि से हम अज्ञान (Ignorance) से मुक्ति पाकर परमतत्व का साक्षात्कार करके सांसारिक बंधनों (दुखों) से हमेशा-हमेशा के लिए मुक्ति (Liberation) प्राप्त कर सकते है. मनु स्मृति में भी कहा गया है-

सम्यक्दर्शनसम्पन्नः कर्मभिर्ननिबध्यते |
दर्शनेनविहीनस्तुसंसारंप्रति गच्छति || [3]

उपर्युक्त विवेचनों से यह स्पष्ट हो जाता है कि धर्म और दर्शन दोनों का उद्देश्य जीव को सांसारिक दुखों से मुक्ति एवं ईश्वरानुभूति में सहायता करना है| बी के लाल के शब्दों में- "It some how believes that life is full of suffering and that the aim of religion and philosophy is to attain freedom from suffering."[4] दोनों की पद्धति में अंतर है, दर्शन की पद्धति बोद्धिक है तथा धर्म की पद्धति अंतर्बोध अथवा विश्वास पर आधारित है|

रमाकांत त्रिपाठी के अनुसार -"While philosophy is based on reason, religion, depends on revelation the one demands clear perception, the other demands unconditional surrender and obedience."[5] दर्शन किसी भी विषय को तर्क-वितर्क के द्वारा समझने का प्रयास करता है किन्तु धर्म में इसकी कोई आवश्यकता नहीं होती है| धर्म में तो अगाध श्रद्धा और आस्था की नितान्त आवश्यकता होती है| दर्शन बुद्धि अथवा तर्क की विषयवस्तु है और धर्म आस्था व विश्वास की विषयवस्तु है| स्वामी विवेकानंद ने इसी बात को इस प्रकार अभिव्यक्त किया है- "Faith in ourselves, faith in God this is the secret of greatness"|[6] दर्शन एवं धर्म दोनों एक दुसरे के पूरक ही नहीं हैं अपितु दोनों एक ही परमतत्व की और इशारा करते हैं| संस्कृत-हिन्दी शब्द कोष में भी दर्शन शब्द का अर्थ धार्मिक ज्ञान या शास्त्रोक्त सिद्धांत बताया गया है|[7] भारत में धर्म और दर्शन साथ-साथ चलते हैं| दर्शन और धर्म में कोई मौलिक भेद नहीं है, यथा- वेदान्त दर्शन और वेदान्त धर्म, जैन दर्शन और जैन धर्म, बौद्ध धर्म और बौद्ध दर्शन में कोई अंतर नहीं दिखाई देता है|

भारतीय धर्म एवं दर्शन के समस्त क्रियाकलापों एवं सिद्धांतों का मूल आधार एवं चरमोद्देश्य ईश्वर ही है| ईशावास्योपनिषद् में कहा गया है "ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंचजगत्यां जगत्" [8] अर्थात समस्त संसार में जो कुछ भी है, सर्वत्र में ईश्वर व्याप्त है| भारतीय धर्म के मूलस्रोत वेद हैं| अद्यतन प्राप्त साक्ष्यों के आधार पर हम यह मानकर चलते हैं कि वेदों से ही भारतीय सभ्यता और संस्कृति का इतिहास प्रारम्भ होता है| वेदों में ही भारतीय धर्म एवं दर्शन बीजरूप में छिपा हुआ है| भारतीय मत के अनुसार वेद अनादि अथवा अपौरुषेय हैं| ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में कहा गया है कि 'ऋचः सामानिजज्ञिरे' अर्थात विराट पुरुष से वेद की उत्पत्ति हुई है| भारतीय दर्शन के ईश्वर सम्बन्धी विचार भी वेदों में सूत्रात्मक रूप में विद्यमान हैं| ऋग्वेद में अनेकेश्वरवाद, एकेश्वरवाद, त्रयेश्वरवाद, एकवाद आदि सिद्धान्तों का निरूपण किसी न किसी रूप में अवश्य देखने को मिलजाता है| अब यहाँ पर वेद, उपनिषद्, भारतीय दर्शन में उल्लिखित ईश्वर सम्बन्धी प्रमुख सिद्धांतों का संक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत किया जाता है|

अनेकेश्वरवाद- वेदों में अग्नि, वरुण, वायु, रूद्र आदि कई देवताओं की स्तुति की गयी है| वैदिक ऋषि अनेक देवी-देवताओं में विश्वास रखते थे| इसी को बहुदेववाद या अनेकेश्वरवाद कहा जाता है| यहाँ शक्तिशाली एवं मानव मस्तिष्क से परे प्राकृतिक घटनाओं को ईश्वर के रूप में ग्रहण किया गया था| विभिन्न प्राकृतिक घटनाओं अथवा शक्तियों की देवता के रूप में पूजा की जाती थी| सूर्य, आकाश, अग्नि, वरुण, समुद्र, नदी आदि विभिन्न देवताओं के प्रतीक माने जाते थे| प्राकृतिक घटनाओं की पूजा करने के कारण वैदिक अनेकेश्वरवाद को प्राकृतिक अनेकेश्वरवाद (Naturalistic Polytheism) भी कहा जाता है|

त्रयेश्वरवाद- मानव-बुद्धि अनेक देवों से भी संतुष्ट नहीं हो सकी, उसने सभी देवों को तीन देवों में अन्तर्निहित कर लिया| ये तीनों देव हैं- पृथ्वी का देवता-अग्नि, अन्तरिक्ष का देवता-वायु, स्वर्ग व द्युलोक का देवता-आदित्य |[9]

एकेश्वरवाद- ऋग्वेद में कहा गया है कि अग्नि, इंद्र, वायु, यम आदि भिन्न-भिन्न देवता एक ही सर्वशक्तिमान

ईश्वर के विविध नाम और रूप हैं 'यो देवानां नामधा एक एव तं सम्प्रश्नं भुवना यंत्यन्या' |[10] इस सिद्धांत के अनुसार ईश्वर की परम सत्ता (Ultimate Reality) है और वह संख्या में एक है| ईश्वर विश्व में व्याप्त और विश्व से परे दोनों है| एक ही ईश्वर अनेक देवी-देवता के रूप में अभिव्यक्त होता है |

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
स भुमिं सर्वतस्पृत्त्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् । । [11]

यहाँ ईश्वर को पुरुष कहा गया है| पुरुष सहस्र मस्तक हैं, सहस्र आँख हैं और सहस्र पैर हैं, वह समस्त पृथ्वी में व्याप्त है और उससे दस अंगुल परे भी है|

एकवाद- एकेश्वरवाद कालांतर में एकवाद के रूप में विकसित हुआ| इस सिद्धांत के अनुसार निर्गुण ब्रह्म ही सर्वोच्च सत्ता है| एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति| [12]

उपनिषद्- उपनिषदों में ईश्वर के दो रूपों का वर्णन मिलता है- सगुण ब्रह्म व निर्गुण ब्रह्म| यहाँ आत्मा और ब्रहम दोनों को एक माना है- 'अयमात्मा ब्रह्म' [13] जीव व ब्रह्म का अभेद अद्वैत कहलाता है| अनेक जीवों की रक्षा करने वाले के रूप में सगुण ईश्वर की मान्यता प्रदान की गयी है- 'नित्यो नित्यानां चेतनः चेतनानाम् | एको बहूनां यो विद्धाति कामान् |' ऐसे वाक्यों के आधार पर ही विभिन्न दार्शनिक सम्प्रदायों का जन्म हुआ |

गीता- गीता में एक व्यक्तित्वपूर्ण सगुण ब्रह्म की आराधना पर जोर दिया गया है| ईश्वर को पुरुषोत्तम कहा गया है | यहाँ ईश्वर सर्वशक्तिशाली, सर्वज्ञ, दयालु, असीम और विराट रूप से सदैव भक्तों की पुकार सुनता है-

अनेकबाहूदरवक्त्रनेत्रं पश्यामि त्वां सर्वतोऽनन्तरूपम् |
नान्तं न मध्यं न पुनस्तवादिं पश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूप || [14]

गीता के अनुसार जब-जब धर्म की हानि होती है और अधर्म का उत्थान होता है, तब-तब ईश्वर का अवतार लेकर अधर्म नाश करके धर्म की स्थापना करते हैं-

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ॥[15]

ईश्वर की शरण में जाने वाला व्यक्ति कभी दुःख नहीं झेलता है | यह ईश्वर विश्व का रचयिता, पालनकर्ता, एवं संहर्ता है| इस प्रकार गीता में भगवान श्रीकृष्ण के रूप में ऐसे ईश्वर की कल्पना की गई है, जो धार्मिक भावना की संतुष्टि में पूर्णतया समर्थ है|

चार्वाक दर्शन- चार्वाक दर्शन भौतिकवादी दर्शन है | यह प्रत्यक्ष को ही ज्ञान का एक मात्र साधन मानता है | ईश्वर का प्रत्यक्ष नहीं होता है इसलिए चार्वाक के अनुसार ईश्वर का कोई अस्तित्व नहीं है | बुद्धि, पौरुषहीन ब्राह्मणों ने स्वार्थसिद्धि के लिए ईश्वर की कल्पना की है |

अग्निहोत्रं त्रयो वेदा त्रिदण्डं भष्मगुंठनम ।
बुद्धिपौरुषहीनानां जीविकेति वृहस्पतिः॥ [16]

ईश्वरवादियों के अनुसार इस विश्व का स्रष्टा है, परन्तु चार्वाक ने इस विचार का खंडन करते हुए यह कहा है कि विश्व का निर्माण चार भूतों पृथ्वी, पानी, हवा, अग्नि के स्वतः संयोजन से होता है | चार्वाक निरीश्वरवादी है | ईश्वर का अस्तित्व न मानने के कारण – यज्ञ, तपस्या, प्रार्थना, बलि आदि का इसमें कोई स्थान नहीं है | स्वर्ग, नरक, पाप, पुण्य, धर्म, अधर्म आदि भी चार्वाक दर्शन में कोई स्थान नहीं रखते हैं |

बौद्ध दर्शन- बौद्ध दर्शन में ईश्वर की सत्ता का निषेध हुआ है | यह अनीश्वरवादी है | बुद्ध के अनुसार विश्व का संचालन प्रतीत्यसमुत्पाद के द्वारा होता है | इसी कार्य-कारण सिद्धांत के कारण विश्व अस्तिमान है | कार्य-कारण-श्रृंखला में विश्व के सभी पदार्थ बंधे हैं | विश्व को परिवर्तनशील एवं अनित्य स्वीकार किया गया है क्योकि बुद्ध ने अनित्यवाद एवं क्षणिकवाद को स्वीकार किया है | नित्य, अपरिवर्तनशील एवं असीम ईश्वर अनित्य, क्षणभंगुर, परिवर्तनशील एवं ससीम विश्व का रचयिता कैसे हो सकता है ? विश्व के रचयिता एवं संचालक के रूप में ईश्वर को मानना निर्रर्थक है | यदि विश्व का कर्ता

ईश्वर को मान भी लिया जाय, तो प्रश्न उठता है कि उसने परिवर्तनशील एवं नश्वर विश्व की रचना क्यों की है ? ईश्वर-रचित विश्व में अशुभता आदि क्यों और किस प्रकार आ गए ? इन प्रश्नों का उचित समाधान नहीं मिलता है | यदि ईश्वर विश्व का स्रष्टा है तो उसने किस प्रयोजन से विश्व की रचना की ? यदि वह बिना प्रयोजन विश्व की रचना करता है तो इससे उसकी अपूर्णता सिद्ध होती है और यदि अप्रयोजन रचना करता है तो इससे उसके पागलपन का संकेत मिलता है | इस प्रकार ईश्वर विश्व का रचयिता नहीं माना जा सकता | बुद्ध ने ईश्वर को परम्परा के आधार पर सिद्ध करना दोषपूर्ण बताया | ईश्वर के विषय में वे सदैव मौन रहे | उन्होंने अपने अनुयायियों को ईश्वर पर आश्रित रहने की सलाह कभी नहीं दी | उनका उपदेश था- 'आत्म दीपो भव' | इस प्रकार बौद्ध धर्म को अनीश्वरवादी कहा जा सकता है|

किन्तु बुद्ध की मृत्यु के बाद उनके शिष्यों ने स्वयं बुद्ध को ही ईश्वर मानकर उनकी पूजा, अर्चना शुरू कर दी | इस प्रकार आगे चलकर बौद्ध दर्शन में भी ईश्वर विचार आ ही गया | इसलिए इसे पूर्णतया निरीश्वरवादी नहीं कहा जा सकता है |

जैन दर्शन – जैन दर्शन भी बौद्धों की भांति ईश्वर का निषेध कर अनीश्वरवाद का समर्थन करता है | जैनियों के अनुसार ईश्वर का अस्तित्व प्रत्यक्ष या अनुमान से सिद्ध नहीं होता है | जैन दर्शन में ईश्वर में कल्पित गुणों का भी निषेध किया गया है | जैनदर्शन में ईश्वर को स्रष्टा के रूप में स्वीकार नहीं किया गया है परन्तु जैन दर्शन उपासना को अस्वीकार नहीं करता है | यहाँ पञ्च महाव्रत का पालन अत्यंत ही सावधानी के साथ किया जाता है | चूंकि यह मूल्यों को प्राथमिकता देता है इसलिए इसे धर्म की श्रेणी में रखा गया है | कहा जा सकता है कि धर्म के लिए ईश्वर का होना आवश्यक है तथा जैन दर्शन में भी ईश्वर का विचार अन्य दर्शनों की भांति आ ही गया | इस प्रकार जैनदर्शन और बौद्ध दर्शन की तत्व मीमांसा में मौलिक अंतर है| जे एन सिन्हा के अनुसार -"There are fundamental difference between the ontology of Jainism and that of Buddhism. Jainism believes in the eternal souls (Jiva) while Buddhism rejects them."17 जैनियों ने भले ही विश्व का निर्माता ईश्वर को नहीं माना किन्तु मुक्त आत्मा को ही ईश्वर कहा है | डॉ.सोहन राज तातेड के शब्दों में 'The Jain as do not believe god as the creator of universe, infact each liberated soul is a ogd or parmatma' | जैनों ने तीर्थंकरों को ही ईश्वर के रूप में उपासना का विषय बना दिया | इस प्रकार जैन दर्शन बाद में ईश्वरवादी का रूप धारण कर लेता है |

सांख्य दर्शन- ईश्वरवाद को लेकर सांख्य के अनुयायियों में मत भेद है | एक वर्ग ईश्वरवाद का समर्थन करता है तो दूसरा वर्ग इसे अनीश्वरवादी बतलाने का प्रयास करता है | वाचस्पति मिश्र एवं अनिरुद्ध आदि विद्वानों ने इसे अनीश्वरवादी कहा है | दूसरी और विज्ञानभिक्षु जैसे विद्वानों ने इसे ईश्वरवादी कहा है | सांख्य के अनुसार नित्य एवं अपरिणामी होने से ईश्वर का रूपांतरण विश्व में किस प्रकार हो सकता है ? इसलिए जगत का मूल कारण नित्य व परिणामी होना चाहिए| अतः सांख्य के अनुसार यह नित्य परिणामी कारण प्रकृति है | प्रकृति के संचालक एवं नियामक के रूप में भी ईश्वर सिद्ध नहीं होता, प्रकृति के नियमन व संचालन में कोई उद्देश्य होगा और इससे उसमें अपूर्णता का दोष लग जाता है | सांख्य दर्शन जीवों की अमरता में विश्वास करता है, ईश्वर को मानने से जीवों की अमरता व स्वतंत्रता बाधित होती है | यदि जीव ईश्वर का अंश है तो उसमें सर्वज्ञ, शक्तिमान आदि ईश्वरीय गुण विद्यमान होने चाहिए ऐसी बात नहीं दिखाई देती है | सांख्य के अनुसार वेद अपौरुषेय हैं अतः वेदों के रचयिता के रूप में ईश्वर को मानना तर्कसंगत नहीं है | ईश्वर के अस्तित्व का ज्ञान प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द (वेद) से सिद्ध नहीं होता है |

विज्ञान भिक्षु के अनुसार सांख्य सूत्र में उल्लिखित 'ईश्वरासिद्धेः' से ईश्वर असिद्ध नहीं होता है|

इनके अनुसार अचेतन प्रकृति को जगत के सृजन हेतु गति प्रदान करने एवं परिवर्तित करने हेतु संसर्ग की आवश्यकता होती है | ईश्वर के संसर्ग मात्र से प्रकृति में विकृति पैदा हो जाती है और जगत का सृजन हो जाता है | यद्यपि सांख्य दर्शन के भाष्यकारों में ईश्वर को लेकर मतैक्य नहीं है तथापि अधिकतर विद्वानों ने इसे अनीश्वरवादी दर्शन कहा है |

योग दर्शन - योग दर्शन और सांख्य दर्शन समान तंत्र हैं – 'सांख्ययोगौ पृथग्बाला: प्रवदन्ति न पंडिता:' |18 योग दर्शन सांख्य के तत्वमीमांसा को अपनाकर उसमें ईश्वर विचार को जोड़ देता है, इसी कारण योग दर्शन को सेश्वर सांख्य और सांख्य दर्शन को निरीश्वर सांख्य कहा जाता है | योग दर्शन के प्रवर्तक महर्षि पतंजलि के अनुसार ईश्वर का सैद्धांतिक मूल्य नहीं अपितु इसका व्यावहारिक मूल्य है | योग दर्शन का उद्देश्य चित्तवृत्ति का निरोध है | इस कार्य में ईश्वर की भक्ति अतिआवश्यक है | इसलिए योग दर्शन में 'ईश्वर-प्रणिधान' को अत्यधिक महत्व दिया गया है - 'तस्य वाचक: प्रणवः' 19 | योग दर्शन के अनुसार प्रकृति और पुरुष दोनों विपरीत सत्ताओं का संयोग व वियोग ईश्वर के द्वारा ही हो सकता है | ईश्वर विश्व का निमित्त कारण एवं प्रकृति उपादान कारण है | ईश्वर दयालु, अन्तर्यामी, धर्म-ज्ञान-ऐश्वर्य का स्वामी एवं एक है |

न्याय-वैशेषिक दर्शन- न्याय और वैशेषिक दोनों के ईश्वर सम्बन्धी विचार समान हैं | नैयायिकों ने ईश्वर का अस्तित्व सिद्ध करने के लिए कई तर्क प्रस्तुत किये है i- विश्वरुपी सावयव पदार्थ का कारण ईश्वर है | ii- अदृष्ट अधिष्टाता के रूप में ईश्वर को मानना आवश्यक है | iii- धर्मग्रंथों के प्रमाण से भी ईश्वर का अस्तित्व सिद्ध होता है | वैशेषिक के अनुसार ईश्वर को महेश्वर कहा गया है | ईश्वर जगत का निमित्त कारण है | यह नित्य परमाणुओं, दिक्, काल, आकाश, मन एवं आत्माओं से विश्व की सृष्टि करता है | ईश्वर के अस्तित्व को बतलाते हुए उदयनाचार्य ने कहा है-

> 'कार्यायोजन धृत्यादेः पदात् प्रत्ययतः | श्रुतेः वाक्यात् संख्याविशेषाच्च साध्यो विश्वविद्व्ययः ||[20]

न्याय- वैशेषिक के अनुसार ईश्वर एक, नित्य, सर्वव्यापी, सर्वज्ञ, पूर्ण, षडैश्वर्य संपन्न है | ईश्वर ही जीवों का धर्मव्यवस्थापक, उनका कर्म-फलदाता और उनके सुख-दुःख का निर्णायक है |

मीमांसा दर्शन- मीमांसा के प्रवर्तक जैमिनी ने ईश्वर का उल्लेख नहीं किया है | इस दर्शन में कर्मवाद पर जोर दिया गया है और ईश्वर को यहाँ अत्यंत गौण स्थान प्राप्त है | मीमांसा के अनुसार ईश्वर को विश्व का स्रष्टा, पालनकर्ता, संहारक, नियमनकर्ता नहीं कहा जाता है | विश्व की सृष्टि व संहार की व्याख्या बिना ईश्वर को माने हुए की जा सकती है, अतः ईश्वर के अस्तित्व को मानने की कोई आवश्यता नहीं है | मीमांसा को अनेकेश्वरवादी भी कहा जाता है क्योकि इसमें अनेक देवताओं का उल्लेख किया गया है | इन देवों का अस्तित्व स्वतन्त्र नहीं माना गया है और न इनका कार्य ही महत्वपूर्ण है | इनकी उपयोगिता मात्र इतनी है कि इनके नाम पर वैदिक ऋषि होम किया करते थे | इस दर्शन में देवताओं को वास्तविक सत्ता के रूप में स्वीकार नहीं किया गया है अतः अनीश्वरवादी कहना भी युक्तियुक्त नहीं होगा | कुमारिल ने वेदों को अपौरुषेय व स्वतःप्रामाण्य माना है और वेदों के रचनाकर्ता के रूप में भी ईश्वर को अस्वीकार किया है | कुछ विद्वानों के अनुसार देवों की तुलना महाकाव्य के अमर पात्रों से की गई है | इस प्रकार मीमांसा दर्शन अनीश्वरवादी सिद्ध होता है | परवर्ती मीमांसकों ने कर्मफल प्रदानकर्ता के रूप में ईश्वर की सत्ता स्वीकार की है | मैक्समूलर के अनुसार – 'वेदों में विश्वास ही आस्तिकता है और मीमांसा वेदाधारित है व वेदों में इसका अखंड विश्वास है | वेद ईश्वर का अस्तित्व पूर्णतया स्वीकार करते है, अतः मीमांसा को निश्चित रूप से ईश्वरवादी कहा जा सकता है' |[21]

अद्वैत वेदांत- शंकराचार्य ने ब्रह्म को ही एक मात्र परम सत्ता कहा है | आत्मा और ब्रह्म में कोई अंतर नहीं है | दोनों एक ही सत्ता के दो नाम हैं | छान्दोग्योपनिषद् में भी कहा गया है- 'अयमात्मा ब्रह्म' [22] | अज्ञानवश व्यक्ति आत्मा और ब्रह्म में द्वैत मानता है और बन्धनग्रस्त हो जाता है | यह शुद्ध चैतन्य व प्रकाशस्वरूप है| यह ज्ञाता-ज्ञान-ज्ञेय से परे निर्गुण व निरपेक्ष सत्ता है | सी.डी.शर्मा के शब्दों में -"Atman is the same as Brahman. It is pure consciousness. It is the self, which is self luminous and which transcends the subject-object duality and the trinity of knower, known and knowledge, and all the categories of the intellect. It is the unqualified

absolute"|[23] शंकर का निर्गुण ब्रह्म धार्मिक व्यक्तियों को संतुष्ट नहीं कर पाता है, इसलिए उन्होंने अपने दर्शन में ईश्वर विचार भी प्रस्तुत किया है | ब्रह्म का सम्बन्ध जब माया से होता है, तब वही ईश्वर बन जाता है- 'मायोपहितं चैतन्यं ब्रह्म' | ईश्वर सर्वोच्च ब्रह्म नहीं है क्योकि ईश्वर एकत्व बुद्धि-गम्य नहीं है |[24] ब्रह्म के दो रूप हैं- निर्गुण ब्रह्म और सगुण ब्रह्म | निर्गुण ब्रह्म निर्विकल्पक, निराकार, अवर्णनीय है | इसकी व्याख्या निषेधात्मक रूप से 'नेति-नेति' द्वारा की जा सकती है| सगुण रूप में ब्रहम ही ईश्वर कहलाता है | यह धार्मिक भावना को तुष्ट करता है|

यह व्यक्तित्वपूर्ण एवं जग-कर्ता है तथा व्यक्तियों को कर्मानुसार सुख-दुःख प्रदान करता है | ब्रह्म विश्व से परे व विश्व में व्याप्त दोनों है | शंकर के अनुसार तीन सोपान हैं – प्रथम सोपान में जगत सत्य प्रतीत होता है, द्वितीय सोपान में जगत व जगत-कर्ता दोनों सत्य प्रतीत होते हैं, तृतीय सोपान में केवल ब्रह्म सत्य अन्य सब मिथ्या | इस प्रकार प्रथम मत में निरीश्वरवाद, द्वितीय मत में ईश्वरवाद तथा तृतीय मत में अद्वैतवाद सिद्ध होता है | ये तीनों ज्ञान की बृद्धि के तीन स्तर है | ईश्वर की उपासना से अज्ञानी का अज्ञान दूर होता है, चित्त की शुद्धि होती है और ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति में सहायता मिलती है | ईश्वर सत्चिदानन्द है, यह सद्गुणों की खान है | यह विश्व की रचना अपनी माया शक्ति के द्वारा लीला रूप में करता है | ब्रह्मज्ञान वेदान्त का चरमोद्देश्य है और ब्रह्म की प्राप्ति का आवश्यक सोपान ईश्वरोपासना है |

विशिष्टाद्वैत- रामानुज के दार्शनिक विचारों को विशिष्टाद्वैत के नाम से जाना जाता है क्योकि इसमें जीवों तथा भौतिक जगत की वास्तविकता का भी समर्थन किया गया है| रामानुज के अनुसार ब्रह्म ही एक मात्र परम सत्ता है | इनके ब्रह्म में ईश्वर, चित् एवं अचित् तीनों तत्व पाए जाते है | यद्यपि तीनों तत्व सत्य है तथापि चित् और अचित् की अपनी कोई स्वतन्त्र सत्ता नहीं है | ईश्वर द्रव्य है और चित् एवं अचित् उसके गुण हैं | रामानुज के दर्शन में ईश्वर व ब्रह्म के बीच कोई अंतर नहीं किया गया है | ब्रह्म को ईश्वर भी कहा गया है | ब्रह्म में आत्मा और अनात्मा का भेद है, इसी कारण ब्रह्म को व्यक्ति विशेष कहा जाता है | रामानुज का ब्रह्म अनन्त गुणों का भण्डार, सर्वशक्तिमान, एवं दयालु है | ब्रह्म सगुण है निर्गुण नहीं है | ब्रह्म ही जगत सृष्टि, स्थिति, प्रलय करने वाले हैं | प्रलय की अवस्था में जब भौतिक पदार्थों का नाश हो जाता है तब चित् (जीव) एवं अचित् (प्रकृति) दोनों तत्व बीजरूप में ब्रह्म में ही निहित रहते हैं | इस अवस्था को 'कारण ब्रह्म' कहते हैं | सृष्टिकाल में ब्रह्म शरीरी जीवों एवं भौतिक तत्वों के रूप में व्यक्त होता है, इसे 'कार्य ब्रह्म' कहा जाता है | रामानुज के अनुसार ब्रह्म उपासना का विषय है | वह भक्तों के प्रति दयालु है | उसमें ज्ञान, शक्ति, ऐश्वर्य, तेज आदि गुण विद्यमान है | व्यक्ति को मोक्ष की प्राप्ति ईश्वर (ब्रह्म) की कृपा से प्राप्त होती है | ब्रह्म (ईश्वर) एक है और स्वयं को भिन्न-भिन्न रूपों में प्रकट करता है | ईश्वर के पांच रूप स्वीकार किये गए हैं – 1-अंतर्यामी 2-नारायण 3-व्यूह 4-अवतार 5-अर्चावतार | रामानुज का विशिष्टाद्वैत ईश्वरवाद का सर्वोत्तम उदाहरण है |

सन्दर्भ

1. बसंत कुमार लाल,कॉन्टैमपौरेरी इंडियन फिलासोफी, MLBD, Delhi, पृष्ठ-489
2. महाभारत
3. मनुस्मृति
4. बसंत कुमार लाल,कॉन्टैमपौरेरी इंडियन फिलासोफी, MLBD, Delhi, पृष्ठ-13
5. रमाकांत त्रिपाठी, स्पिनोजा इन द लाईट ऑफ़ वेदान्ता, पृष्ठ-13
6. स्वामी विवेकानन्द, हिज कॉल टू द नेशन, पृष्ठ- 72
7. वामन शिवराम आप्टे, संस्कृत-हिन्दी कोश, पृष्ठ-450
8. ईशावास्योपनिषद्
9. वैदिक विश्व और भारतीय संस्कृति, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पृष्ठ-188
10. ऋग्वेद 10\82\3
11. ऋग्वेद- पुरुषसूक्त
12. ऋग्वेद
13. बृहदारण्यक उपनिषद

14. गीता 11-16
15. गीता 4-7,8
16. सर्व दर्शन संग्रह
17. जे.एन.सिन्हा,ए हिस्ट्री ऑफ़ इण्डियन फिलोसोफी, सिन्हा पब्लिशिंग हाउस, कलकत्ता,1971 पृष्ठ-338
18. गीता-5-4
19. योगसूत्र 1-27
20. न्याय कुशुमांजलि
21. The Six Systems of Indian Philosophy by F. Max Muller
22. शांकर भाष्य, श्रीमद् भगवद्गीता, गीता प्रेस गोरखपुर, पृष्ठ-159
23. चन्द्र धर शर्मा, ए क्रिटिकल हिस्ट्री ऑफ इण्डियन फिलोसोफी, MLBD-Delhi, 1978, पृष्ठ – 283
24. एस एन दास गुप्त,ए हिस्ट्री ऑफ इण्डियन फिलोसोफी, MLBD-Delhi, 1975, पृष्ठ-75